# संस्कृत-साहित्य के विकास में जैनाचार्यों का योगदान

☐ डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

संस्कृत साहित्य के विकास एवं समुन्नति में जैनाचार्यों एवं विद्वानों का महत्त्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्होंने इस साहित्य की प्रत्येक विधा पर काव्य-रचना करके उसके प्रचार-प्रसार की दिशा में कार्य किया। जैनाचार्यों ने साहित्यसर्जन करते समय लोक-रुचि का विशेष ध्यान रखा, इसलिये उन्होंने प्राकृत के साथ-साथ संस्कृत में भी काव्य, चरित, कथा, नाटक, पुराण, छन्द एवं अलंकार जैसे सभी विषयों पर साहित्य-जगत् को मूल्यवान् रचनाएँ भेंट की। वास्तव में संस्कृत का जैन वाङ्मय विशाल एवं महत्त्वपूर्ण है। लेकिन विशाल साहित्य होने पर भी उसका प्रकाशन एवं समुचित मूल्यांकन नहीं होने के कारण उसे साहित्यजगत् में यथोचित स्थान प्राप्त नहीं हो सका है। अकेले राजस्थान के जैन ग्रन्थभण्डारों में संस्कृत ग्रन्थों की लाखों पाण्डुलिपियाँ संगृहीत हैं। उस विशाल साहित्य का परिचय कराना एक ही लेख में संभव नहीं है, फिर भी अति संक्षिप्त रूप में हम यहाँ उसका परिचय देना चाहेंगे।

**दर्शन एवं न्याय :**

दूसरी शताब्दी में होने वाले आचार्य समन्तभद्र जैन दर्शन के प्रस्तोता माने जा सकते हैं। अनेकान्तवाद को व्यवस्थित रूप से प्रस्तुत करने वाले समन्तभद्र प्रथम आचार्य हैं। उनकी आप्तमीमांसा एवं युक्त्यनुशासन दोनों ही महत्त्वपूर्ण कृतियाँ हैं। आप्तमीमांसा में एकान्त-वादियों के मन्तव्यों की गम्भीर आलोचना करते हुये आप्त की मीमांसा की गयी है और युक्तियों के साथ स्याद्वाद सिद्धान्त की व्याख्या की गयी है। इसी तरह युक्त्यनुशासन में जैन शासन की निर्दोषता युक्तिपूर्वक सिद्ध की गयी है। आप्तमीमांसा पर भट्टाकलंक की अष्टशती तथा आचार्य विद्यानन्दि का अष्टसहस्री नामक विस्तृत भाष्य उपलब्ध है। ये दोनों ही आप्तमीमांसा की लोकप्रियता एवं उसकी महत्ता को सिद्ध करने वाली कृतियाँ हैं।

सातवीं शताब्दी में होने वाले भट्टाकलंक जैन न्याय के संस्थापक माने जाते हैं। इनके पश्चात् होने वाले सभी जैनाचार्यों ने इनके द्वारा प्रस्थापित मार्ग का अनुसरण किया है। अष्टशती के अतिरिक्त लघीयस्त्रय, प्रमाणसंग्रह, न्यायविनिश्चय, सिद्धिविनिश्चय इनकी महत्त्व-पूर्ण दार्शनिक कृतियाँ हैं। दर्शन जैसे गहन विषय को इन्होंने इन कृतियों में प्रस्तुत करके गागर में सागर को भरने जैसा कार्य किया है।

आठवीं शताब्दी में महान् दार्शनिक आचार्य हरिभद्र सूरि हुए, जिन्होंने अनेकान्तसिद्धान्त की पुनः प्रतिष्ठा की और अपनी अनेकान्तजयपताका, षट्दर्शनसमुच्चय एवं अनेकान्तवाद जैसे दार्शनिक ग्रन्थों की रचना करके देश के दार्शनिक जगत् में अनेकान्त की दुन्दुभि बजायी। इसके

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

पश्चात् आचार्य माणिक्यनन्दी हुए जिन्होंने अपनी परीक्षामुख कृति में जैन न्याय को सूत्र रूप में प्रस्तुत किया। परीक्षामुख ९ परिच्छेदों में विभक्त है और इसकी सूत्र संख्या २०७ है। आचार्य प्रभाचन्द्र [सन् ८२५] ने इस पर प्रमेयकमलमार्तण्ड जैसी विशालकाय टीका लिख कर जैन न्याय के विकास में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान किया। इनकी अकलंक के लघीसत्रय पर न्यायकुमुदचन्द्रोदय टीका भी एक महत्त्वपूर्ण कृति है।

नवीं शताब्दी में होने वाले आचार्य विद्यानन्दि जैन न्याय के प्रकाण्ड विद्वान् माने जाते हैं। इनकी कितनी ही छोटी-बड़ी रचनाएँ दर्शनसाहित्य की महत्त्वपूर्ण रचनाएँ हैं, जिनमें विभिन्न मान्यताओं की प्रामाणिक आलोचना की गयी है तथा अकलंक के विचारों का युक्तिपूर्वक समर्थन किया गया है। इनकी कृतियों में आप्तपरीक्षा, अष्टसहस्री, प्रमाणपरीक्षा, पत्रपरीक्षा एवं तत्वार्थश्लोकवार्तिक के नाम उल्लेखनीय हैं।

दसवीं शताब्दी में देवसेन हुए जिनकी लघुनयचक्र, बृहद्नयचक्र एवं आलापपद्धति न्याय-शास्त्र की गम्भीर रचनायें हैं। इसी समय अनन्तवीर्य हुये जिन्होंने परीक्षामुख पर प्रमेयरत्न-माला टीका लिख कर उसकी लोकप्रियता में चार चाँद लगा दिये। इन्होंने अकलंक की सिद्धि-विनिश्चय पर भी अच्छी टीका लिखी थी।

ग्यारहवीं-बारहवीं शताब्दी में होने वाले आचार्य हेमचन्द्र सूरि का योगदान जैन न्याय के क्षेत्र में ही नहीं किन्तु संस्कृत वाङ्मय के सभी क्षेत्रों में अद्भुत एवं आश्चर्यकारी है। उनकी प्रमाणमीमांसा जैन न्याय की अनूठी रचना मानी जाती है।

उक्त आचार्यों के अतिरिक्त देवसूरि का प्रमाणनयतत्त्वालोकालंकार, जिस पर विशालकाय स्याद्वादरत्नाकर ग्रन्थ और रत्नाकरावतारिका नामक टीका लिखी गईं, चन्द्रप्रभसूरि की दर्शनशुद्धि एवं प्रमेयरत्नकोश [११०० ए. डी] माघनन्दि का पदार्थसार, राजशेखर सूरि की स्याद्वादकलिता जैसी रचनाओं का नाम भी उल्लेखनीय है।

१८वीं शताब्दी में होने वाले अभिनव धर्मभूषण की न्यायदीपिका को जैन न्याय के मौलिक तत्त्वों को सरल एवं सुबोध रीति से प्रतिपादन करने वाली कृति के रूप में मान्यता प्राप्त है। न्यायदीपिका में प्रमाण एवं नय का बहुत ही स्पष्ट एवं व्यवस्थित विवेचन किया गया है। २०वीं शताब्दी में होने वाले दार्शनिक विद्वान् पंडित चैनसुखदास न्यायतीर्थ का जैन-दर्शनसार एक महत्त्वपूर्ण कृति मानी जाती है जिसमें जैनदर्शन के सभी विषयों पर संक्षिप्त किन्तु सरल रीति से प्रकाश डाला गया है।

**काव्य:**

जैनाचार्यों ने संस्कृतकाव्यों के विकास में भी महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। उन्होंने महाकाव्य लिखे, चम्पूकाव्य लिखे, चरित्रकाव्य एवं दूतकाव्य निबद्ध किये। लेकिन इन काव्यों की मूल आधारशिला द्वादशांग वाणी है। संस्कृत भाषा का प्रत्येक जैन काव्य सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान एवं सम्यक्चारित्र द्वारा कोई भी मानव चरम सुख प्राप्त कर सकता है, इस सन्देश को प्रसारित करने वाले होते हैं। जैन काव्य वर्णाश्रम धर्म के पोषक न होकर मुनि-आर्यिका, श्रावक-श्राविका को ही समाज का रूप मानते हैं। इसके अतिरिक्त जैन काव्यों के नायक

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

केवल देव, ऋषि, मुनि अथवा राजा नहीं हैं किन्तु राजाओं के साथ सेठ, सार्थवाह, श्रेष्ठी, तीर्थंकर, शूरवीर या सामान्य मानव होते हैं।

आठवीं शताब्दी में होने वाले जटासिंहनन्दि का वरांगचरित्र प्रथम महाकाव्य है जिसमें जैन राजा वरांग का ३१ सर्गों में जीवनचरित निबद्ध है। महाकाव्य के नायक में धीरोदात्त के सभी गुण समवेत हैं। इसमें नगर, ऋतु, उत्सव, क्रीड़ा, रति, विप्रलम्भ, विवाह, जन्म, राज्याभिषेक, युद्धविजय आदि सभी का वर्णन मिलता है। इस शताब्दी में होने वाले जिनसेनाचार्य के पार्श्वाभ्युदय में २३वें तीर्थंकर पार्श्वनाथ का जीवनचरित निबद्ध किया गया है। यह खण्डकाव्य है जो चार सर्गों में विभक्त है।

धर्मशर्माभ्युदय महाकाव्य के रचयिता हैं महाकवि हरिचन्द। यह महाकाव्य २१ सर्गों में पूर्ण होता है तथा इसमें धर्मनाथ स्वामी का जीवनचरित निबद्ध है। प्रस्तुत काव्य की राजस्थान के जैन ग्रंथागारों में कितनी ही प्रतियाँ मिलती हैं। महाकवि हरिचन्द का ही दूसरा महाकाव्य जीवन्धरचम्पू है। इसमें महाराजा जीवन्धर का जीवनचरित निबद्ध है। गद्य-पद्य मिश्रित यह महाकाव्य अपने ढंग का अनोखा काव्य है।

११वीं शताब्दी में होने वाले वीरनन्दि ने शक संवत् ९४३ में चन्द्रप्रभचरित की रचना समाप्त की। १५ सर्गों में विभक्त यह काव्य आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभ के जीवन को प्रस्तुत करने वाला है। इसी शताब्दी में महाकवि धनंजय हुये जिन्होंने राघव पाण्डवीय जैसे महाकाव्य की सर्जना की। काव्य की कथा राम एवं पाण्डव दोनों कथाओं को प्रकट करने वाली है। इसका दूसरा नाम द्विसंधान महाकाव्य भी है। प्रस्तुत महाकाव्य में १८ सर्ग हैं।

१२वीं शताब्दी में महाकवि वाग्भट्ट हुये जिन्होंने "नेमिनिर्वाण" काव्य की रचना की। यह भी उच्चस्तरीय महाकाव्य है और अपने समय का लोकप्रिय काव्य रहा है।

अनेक काव्यों के रचयिता महाकवि हेमचन्द्राचार्य के नाम से सभी विद्वान् परिचित हैं। उनका महाकाव्य त्रिषष्टिशलाकापुरुषचरित एवं द्वयाश्रयकाव्य संस्कृत के अनूठे काव्य हैं। प्रथम महाकाव्य में ६३ शलाका (श्लाघ्य) महापुरुषों का जीवनचरित निबद्ध है जबकि दूसरे काव्य में कुमारपाल का जीवन वर्णित है। इसीलिये इसका दूसरा नाम कुमारपालचरित भी है। यह महाकाव्य २८ सर्गों में विभक्त है।

महाकवि सोमदेव के यशस्तिलक चम्पू का चम्पूकाव्यों में उत्कृष्ट स्थान है। महाकवि ने इस काव्य में राजा यशोधर के जीवनचरित को काव्यमय भाषा में प्रस्तुत किया है। इस चम्पूकाव्य की नागौर, आमेर एवं जयपुर के ग्रन्थभण्डारों में पाण्डुलिपियाँ उपलब्ध होती हैं। १३वीं शताब्दी में होने वाले महापंडित आशाधर के शिष्य अर्हद्दास ने पुरुदेव की रचना करके चम्पू काव्यों में एक और कड़ी जोड़ दी। इस काव्य में प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ के जीवन को प्रस्तुत किया गया है।

महाकवि असग का महावीरचरित एक महत्त्वपूर्ण काव्य है जो २४वें तीर्थंकर भगवान् महावीर के जीवन का दिग्दर्शन कराता है।

उक्त महाकाव्यों के अतिरिक्त आचार्य गुणभद्र का जिनदत्तचरित एवं धन्यकुमारचरित देवेन्द्रसूरि का महावीरचरित (१०२७ ए. डी.। देवसूरि का बलभद्रचरित, महापंडित

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आशाधर का त्रिषष्टिस्मृति, अर्हद्दास का मुनिसुव्रतचरित, अजितप्रभ सूरि का शांतिनाथचरित आदि चरितकाव्यों के नाम उल्लेखनीय हैं।

१५वीं शताब्दी में पद्मनाभक्त कवि हुये जिन्होंने संवत् १४६२ में यशोधरचरित की रचना की। यशोधरचरित अपने समय का लोकप्रिय काव्य है जिसकी कितनी ही पाण्डुलिपियाँ राजस्थान के विभिन्न शास्त्र-भण्डारों में उपलब्ध होती हैं। इसी शताब्दी में भट्टारक सकलकीर्ति हुये जो संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। इन्होंने अपना समस्त जीवन संस्कृत के प्रचार प्रसार में समर्पित किया हुआ था। इनके द्वारा निबद्ध यशोधरचरित्र, मल्लिनाथचरित्र, जम्बूस्वामिचरित्र, सुदर्शनचरित्र, शान्तिनाथचरित्र, पार्श्वनाथचरित्र वर्द्धमानचरित्र संस्कृत की उल्लेखनीय कृतियाँ हैं। अकेले भट्टारक सकलकीर्ति ने संस्कृत भाषा में २५ से भी अधिक रचनाओं को निबद्ध करके एक नया कीर्तिमान स्थापित किया।[1]

भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा में होने वाले भट्टारकों एवं अन्य साधुओं ने संस्कृत काव्यों को निबद्ध करने की परम्परा को जीवित रखा। ब्रह्म जिनदास ने संस्कृत में जम्बूस्वामी-चरित्र, रामचरित्र (पद्मपुराण)हरिवंशपुराण, भट्टारक सोमकीर्ति ने प्रद्युम्नचरित्र, एवं यशोधर-चरित्र एवं भट्टारक शुभचन्द्र ने चन्द्रप्रभचरित्र, करकण्डुचरित्र, चन्दनाचरित्र, जीवन्धरचरित्र, श्रेणिकचरित्र, पाण्डवपुराण जैसे कितने ही काव्य लिख कर संस्कृत काव्यधारा को जीवित रखा।

ढूंढाड प्रदेश में होने वाले संस्कृत जैन कवियों में पं. राजमल्ल, पं. जगन्नाथ तथा भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति का नाम विशेषत: उल्लेखनीय है। पं. राजमल्ल ने संवत् १९४२ में जम्बूस्वामिचरित्र की रचना की थी। इसी तरह पं. जगन्नाथ ने सुखनिधान, नेमिनरेन्द्रस्तोत्र जैसे काव्यों की रचना करके संस्कृत की लोकप्रियता में वृद्धि की।

## व्याकरण

व्याकरणग्रन्थों की रचना के क्षेत्र में भी जैनाचार्यों का उल्लेखनीय योगदान है। आचार्य पूज्यपाद प्रथम जैन वैय्याकरण हैं जिन्होंने जैनेन्द्रव्याकरण की रचना की थी। जैनेन्द्रव्याकरण वृहत् व्याकरण है जिस पर विभिन्न टीकायें उपलब्ध हैं। इनमें अभयनन्दि कृत महावृत्ति, प्रभाचन्द्र कृत शब्दाम्भोजभास्कर, आचार्य श्रुतकीर्तिकृत पंचवस्तुप्रक्रिया एवं पं. गुणनन्दि की प्रक्रिया उल्लेखनीय हैं।

दूसरा जैन व्याकरण शाकटायन का शब्दानुशासन अथवा शाकटायनव्याकरण है। इस पर स्वयं सूत्रकार ने विस्तृत टीका अमोघवृत्ति निबद्ध की थी। इस व्याकरण पर और भी टीकायें उपलब्ध होती हैं। इनमें यक्षवर्मा की चिंतामणि टीका, अजितसेनाचार्य की मणिप्रकाशिका, आचार्य अभयचन्द्र की प्रक्रियासंग्रह, भावसेन की शाकटायनटीका एवं दयापाल मुनि की रूपसिद्धि के नाम उल्लेखनीय हैं।[2]

आचार्य हेमचन्द्र अपने समय के लोकप्रिय वैय्याकरण थे। इनका "सिद्धहेमशब्दानुशासन" अत्यधिक लोकप्रिय व्याकरण है। इस व्याकरण पर स्वयं ग्रन्थकार ने तो लघुवृत्ति एवं बृहद्वृत्ति लिखी ही किन्तु अन्य २८ टीकायें और उपलब्ध होती हैं।[3]

---

१. देखिये राजस्थान के जैन सन्त: व्यक्तित्व एवं कृतित्व,
२. अनेकान्त वर्ष १२-किरण-९, पृष्ठ २९६
३. जैन ग्रन्थ भण्डार्स इन राजस्थान-पृष्ठ १६९

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

देवेन्द्रसूरि के शिष्य गुणरत्नसूरि ने क्रियारत्नसमुच्चय व्याकरण की संवत् १४६६ में रचना समाप्त की थी। हेमचन्द्र के शब्दानुशासन के आधार पर हंसुकला ने कविकल्पद्रुम की रचना करके व्याकरणरचना में एक कड़ी और जोड़ दी।

महाकवि गुणाढ्य के समकालीन सर्ववर्मा ने महाराजा सातवाहन को पढ़ाने के लिए कातन्त्ररूपमाला की रचना की थी। यह अत्यधिक सुबोध एवं संक्षिप्त व्याकरण है तथा इस पर भी १४ टीकायें प्राप्त होती हैं।

जैनाचार्यों ने स्वयं ने व्याकरणग्रन्थों के निर्माण के साथ-साथ अन्य व्याकरणों पर भी टीकायें निबद्ध की। इनमें सारस्वतव्याकरण पर बीस से भी अधिक टीकायें उपलब्ध होती हैं।

## नाटक

नाटक ग्रन्थों के लिखने में जैनाचार्य किसी से पीछे नहीं रहे। हस्तिमल्ल सबसे प्रमुख जैन नाट्यकार थे जिन्होंने विक्रान्तकौरव, सुलोचना नाटक, सुभद्राहरण, अंजनापवनंजय, मैथिलीकल्याण जैसे नाटक ग्रन्थ लिख कर इस क्षेत्र में अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया। हस्तिमल्ल उभयभाषा-कविचक्रवर्ती की उपाधि से विभूषित थे तथा वे १३वीं शताब्दी के नाटककार थे।

हेमचन्द सूरि के शिष्य रामचन्द्र सूरि प्रसिद्ध नाट्यकार थे, जिन्होंने १० नाटक ग्रन्थों की रचना करके एक नया कीर्तिमान स्थापित किया। रामचन्द्र सूरि के नाटकों के नाम निम्न प्रकार हैं—

१. नलविलास नाटक
२. कौमुदीमित्रानन्द (प्रकरण)
३. मल्लिका मकरन्द (प्रकरण)
४. निर्भय भीम (कायोग)
५. पाटवाभ्युदय (नाटक)
६. रघुविलास (नाटक)
७. रोहिणी मृगांक (प्रकरण)
८. वनमाला (नाटक)
९. सत्य हरिश्चन्द्र (नाटक)
१०. राघवाभ्युदय (नाटक)

सम्वत् १५९१ में वादिचन्द्र सूरि ने ज्ञानसूर्योदय नाटक की रचना समाप्त की थी। जैनाचार्यों ने स्वयं ने तो नाटक ग्रन्थों की रचना की किन्तु अन्य नाट्यकारों के नाटकों की पाण्डुलिपियों को सुरक्षित रखने में भी भारी योगदान दिया। महाकवि कालिदास, शूद्रक एवं विशाखदत्त के नाटकों की पाण्डुलिपियाँ राजस्थान के जैन ग्रन्थगारों में उपलब्ध होती हैं।

## पुराण साहित्य

जैनाचार्यों एवं भट्टारकों ने समय-समय पर पुराणग्रन्थों के लिखने में अपना भारी योगदान दिया। इन पुराणों के कारण संस्कृत के पठन-पाठन को अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई तथा इन पुराणों के आधार पर ही आगे कथासाहित्य का विकास हुआ। महाकाव्यों एवं चरित-काव्यों के प्रमुख स्रोत ये पुराण ही हैं। जैन पुराणों में तीर्थंकरों के जीवन परिचय के अतिरिक्त नारायण, प्रतिनारायण, बलभद्र, चक्रवर्ती जैसे शलाकापुरुषों के जीवन का वर्णन रहता है।

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

आचार्य रविषेण सबसे प्रथम पुराणकार हैं जिन्होंने ६७८ ए. डी. में पद्मपुराण की रचना प्रस्तुत की थी। अठारह हजार श्लोक प्रमाण पद्मपुराण में राम का जीवनचरित्र निबद्ध है जो ६३ शलाका पुरुषों में से एक हैं। ९वीं शताब्दी के प्रारम्भ में जैन आचार्य जिनसेन एवं गुणभद्र हुये जिन्होंने संस्कृत भाषा में प्रथम महापुराण की रचना की थी। महापुराण के दो भाग हैं. एक आदिपुराण एवं दूसरा उत्तरपुराण। आदिपुराण आचार्य जिनसेन की कृति हैं और उत्तरपुराण आचार्य गुणभद्र की रचना है। गुणभद्र आचार्य जिनसेन के ही शिष्य थे। महापुराण में २४ तीर्थंकर १२ चक्रवर्ती ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण एवं ९ बलभद्रों के जीवन का विस्तृत वर्णन दिया गया है।

इसी शताब्दी में आचार्य जिनसेन द्वितीय हुये जिन्होंने १२ हजार श्लोक प्रमाण हरिवंश-पुराण की रचना की। हरिवंशपुराण में २२ वें तीर्थंकर नेमिनाथ के साथ ही श्रीकृष्ण, बलराम एवं पाण्डवों की कथा वर्णित है। यह एक प्रकार से जैन महाभारत है। १२वीं शताब्दी में महाकवि असग ने शान्तिनाथ पुराण की स्वतंत्र रूप से रचना की। १५वीं शताब्दी में होने वाले भट्टारक सकलकीर्ति ने आदिनाथ पुराण एवं उत्तरपुराण जैसे पुराणों की रचना करके पुराणसाहित्य के विकास में और अधिक योग दिया। भट्टारक सकलकीर्ति के शिष्य महाकवि ब्रह्म जिनदास ने हरिवंशपुराण एवं पद्मपुराण की रचना करके पुराणों की लोकप्रियता में वृद्धि की। ऐसा लगता है कि उस समय पुराणों का पठन-पाठन खूब जोरों पर था। इसलिये प्रत्येक विद्वान् संस्कृत में पुराण लिखने की ओर झुका हुआ था।

सन् १४९८ में ब्रह्म कामराज ने जयकुमारपुराण की रचना समाप्त की थी। इस पुराण में १३ सर्ग हैं। सन् ५१८ में नेमिदत्त ने नेमिनाथ पुराण की रचना की थी। इस पुराण में १६ अधिकार हैं तथा भगवान् नेमिनाथ का जीवनचरित निबद्ध है।

१६वीं शताब्दी में भट्टारक शुभचन्द्र हुए जो संस्कृत के बड़े भारी विद्वान् थे। उन्होंने पद्मनारायण एवं पाण्डवपुराण नामक दो पुराणों की रचना की थी। १७वीं शताब्दी में भट्टारक धर्मकीर्ति हुए जिन्होंने पद्मपुराण की रचना सन् १६१२ में समाप्त की। इसमें २४ अधिकार हैं। भट्टारक वादिभूषण ने पाण्डवपुराण एवं पद्मपुराण की रचना की थी। इसी तरह भट्टारक श्रीभूषण, जो विद्याभूषण के शिष्य थे, पाण्डवपुराण एवं शान्तिनाथ पुराण की रचना करने में सफल हुए। इसी १७वीं शताब्दी में होने वाले भट्टारक चन्द्रकीर्ति ने आदिनाथपुराण की रचना की थी। राजस्थान के बैराठ नगर में भट्टारक सोमसेन ने पद्मपुराण की रचना की, इसे रामपुराण भी कहा जाता है। इसमें २४ अधिकार हैं जिनमें राम का जीवनचरित निबद्ध है। भट्टारक विद्याभूषण के शिष्य भट्टारक चन्द्रकीर्ति ने तीन पुराणों की रचना की जिनके नाम हैं—आदिपुराण, पद्मपुराण एवं पार्श्वपुराण। सन् १९५६ (?) में अरुणमणि ने जिहानाबाद में अजितपुराण की रचना की थी। संस्कृतभाषा में पुराण लिखने वालों को सम्भवतः ब्रह्म कृष्णदास अन्तिम विद्वान् थे जिन्होंने सन् १६१७ व १६२४ में विमलपुराण एवं मुनिसुव्रतपुराण की रचना की थी।

जैनाचार्यों द्वारा संस्कृत में अध्यात्म साहित्य भी खूब लिखा गया। इस प्रकार के साहित्य में आत्मचिन्तन, मनन, ध्यान, अनुप्रेक्षा आदि विषयों पर विवेचन रहता है। जगत् की वास्तविकता को बतलाने वाला अध्यात्मसाहित्य जैन समाज में बहुत ही लोकप्रिय साहित्य माना

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाता है। आचार्य गुणभद्र प्रथम आचार्य थे जिन्होंने आत्मानुशासन जैसे ग्रन्थ की रचना करके आध्यात्मिकजीवन व्यतीत करने पर जोर दिया। इसमें २७० काव्य हैं जिनमें आत्मा, आत्मा की क्रियाएँ, एवं शरीर आदि पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। आत्मानुशासन जैन साहित्य का बहुत ही लोकप्रिय ग्रन्थ है जिसकी कितनी ही प्रतियाँ राजस्थान के जैन ग्रन्थ भण्डारों में उपलब्ध होती हैं।

अमितिगति का योगसार अध्यात्म विषय की उत्तम कृति है। इसमें ९ अधिकार हैं। इसका दूसरा नाम गीतवीतराग भी है। योगसार सरल भाषा में निबद्ध उच्चस्तरीय कृति है। इन्हीं का सामायिक पाठ आत्मचिंतन के लिये सुन्दर कृति है।

१०वीं शताब्दी में होने वाले आचार्य अमृतचन्द्र अध्यात्म के पारंगत विद्वान् एवं साधक थे। इन्होंने आचार्य कुन्द-कुन्द के समयसार पर आत्मख्याति टीका एवं कलश टीका लिखी। इन दोनों का ही समस्त जैन समाज में ऊंचा स्थान है। इसकी सैकड़ों पाण्डुलिपियाँ उपलब्ध होती हैं।

तपागच्छ के आचार्य मुनिसुन्दरसूरि द्वारा निबद्ध अध्यात्मकल्पद्रुम अध्यात्मविषयक अच्छी कृति है। प्रस्तुत ग्रन्थ १९ अध्यायों में विभक्त है। इसी गच्छ में होने वाले यशोविजयसूरि ने अध्यात्मसार ग्रन्थ की रचना की थी। इसमें ९४८ पद्य हैं जो सात अध्यायों में विभक्त हैं।

महापंडित आशाधर के अध्यात्मरहस्य की उपलब्धि कुछ ही वर्षों पूर्व अजमेर के भट्टारकीय शास्त्रभण्डार से हुई थी। १७वीं शताब्दी के प्रारम्भ में पं० राजमल्ल ने अध्यात्म-कल्पद्रुम की रचना समाप्त की थी। इसी तरह सोमदेव की अध्यात्मतंरगिणी एवं उपाध्याय यशोविजय की अध्यात्मउपनिषद् अध्यात्मशास्त्र की अच्छी रचना मानी जाती है।

जैनाचार्यों में उक्त विषयों के अतिरिक्त कथासाहित्य, सुभाषित एवं नीतिशास्त्र, ज्योतिष, आयुर्वेद, छन्दशास्त्र, कोष एवं पूजा साहित्य में सैकड़ों रचनायें निबद्ध करके संस्कृत-साहित्य के विकास में जो योग दिया वह इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठों में अंकित रहेगा।

—जयपुर

□□

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है
Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org